अतिथि देवो भव

–अब्दुल बिस्मिल्लाह

गर्मी बहुत तेज थी। तीन–चार दिनों से बराबर लू चल रही थी और जगह–जगह मौतें हो रही थीं। शहर की सड़कें चूल्हे पर चढ़े तवे की तरह तप रही थीं। बड़े लोगों ने दरवाजों पर खस की टट्टियाँ लगवा ली थीं और उनके नौकर उन्हें पानी से तर कर रहे थे। दूकानों पर पर्दे गिरे हुए थे। पटरी पर बैठने वाले नाई, खोमचे वाले और लाटरी के टिकट बेचने वाले ओवर ब्रिज के नीचे पहुंच गए थे और शाम होने का इंतजार कर रहे थे। रिक्शों में लोग इस तरह दुबककर बैठते थे, मानो शरीर का कोई अंग अगर बाहर निकलेगा तो वह जल जाएगा। प्रायः सभी के रूमाल पसीना पोंछते–पोंछते काले हो गए थे। देहात के लोग तो अपने चेहरों को मोटे तौलिए या गमछे से इस तरह लपेटे हुए थे कि दूर से वे डाकू–जैसे दिखाई पड़ते थे। पैदल चलने वाले लोगों ने अपने सिर पर छाता नहीं तो अपना बैग ही रख लिया था। किसी–किसी ने तो रूमाल को ही सिर पर बांध लिया था। ठेलों पर बिकने वाला पानी पांच पैसे गिलास से बढ़कर दस पैसे के भाव हो गया था।

इस तरह गर्मी ने उस शहर की समाज–व्यवस्था और अर्थ–व्यवस्था को पूरी तरह अपनी गिरफ्त में ले लिया था। लोग आजाद होते हुए भी गुलाम थे और मजे की बात यह कि वे गर्मी का कुछ बिगाड़ नहीं सकते थे। अतः लू से बचने लिए उन्होंने अपने जेबों में प्याज की छोटी–मोटी पोलियाँ रख ली थीं और शुक्र मना रहे थे।

एक छोटा–सा प्याज सलमान साहब की जेब में भी पड़ा था। इसे उनकी बीवी ने चुपके से रख दिया था। सलमान साहब को हालाँकि इस बात का पूरा पता था, पर

वे यही मानकर चल रहे थे कि प्याज के बारे में उन्हें कुछ भी नहीं मालूम। और अपने इस विश्वास पर वे डटे हुए थे कि लू का प्याज से कोई सम्बन्ध नहीं होता।

सलमान साहब अपना सूटकेस उठाए छन्-छन् करती सड़क पर बढ़े जा रहे थे, हालाँकि उनकी इच्छा हो रही थी कि अपने सिर पर औरों की तरह वे भी रूमाल बांध लें या तौलिया निकालकर चेहरे के इर्द-गिर्द लपेट लें, पर असुविधा के ख्याल से वे ऐसा नहीं कर पा रहे थे। इसके अलावा उन्हें इस बात की उतावली भी थी कि जल्दी से वे मिश्रीलाल गुप्ता के निवास पर पहुंच जाएं। रिक्शा उन्हें मिला नहीं था, अत: अपने मन को वे यह भी समझाते जा रहे थे कि स्टेशन से उसका कमरा ज्यादा दूर नहीं है। यह बात मिश्रीलाल ने ही उन्हें बताई थी।

सलमान साहब मिश्रीलाल गुप्ता से मिलने पहली बार उस शहर में पहुंचे थे। मकान नम्बर तो उन्हें याद था, पर सिचुएशन का पता नहीं था। लेकिन उन्हें पूरा विश्वास था कि वे मिश्रीलाल गुप्ता को अवश्य ही ढूँढ़ लेंगे।

मिश्रीलाल गुप्ता सलमान साहब के पड़ोस का एक ऐसा लड़का था जो कस्बे-भर में अपने क्रान्तिकारी विचारों के कारण मशहूर था। गुप्ता-खानदान का वह पहला युवक था जिसने मांस खाना आरम्भ कर दिया था और मुसलमान होटलों में चाय पिया करता था। जी हाँ, जिस तरह बनारस का विश्वविद्यालय हिन्दू है और अलीगढ़ का विश्वविद्यालय मुसलमान, ठीक उसी तरह उनके कस्बे के होटल भी हिन्दू और मुसलमान थे। यह बात अलग है कि हिन्दू होटलों में मुसलमानों के लिए या मुसलमान होटलों में हिन्दुओं के लिए प्रवेश की कोई मनाही नहीं थी, फिर भी जो धार्मिक लोग थे, वे इसे बुरा समझा करते थे। सलमान साहब के पड़ोसी जैकी साहब हमेशा मुसलमान हलवाई के यहां से ही मिठाई मँगवाते थे, क्योंकि शिवचरण हलवाई जो था, वह इस्तिजे से नहीं रहता था।

उस कस्बे में उन दिनों एक ही स्कूल था और वहां सबको अनिवार्य रूप से संस्कृत पढ़नी पड़ती थी, अत: सलमान साहब ने भी 'राम:, रामौ, रामा:' पढ़ा, और नतीजा यह निकला कि वे उर्दू नहीं पढ़ सके! जैसे मिश्रीलाल के बाबा गिरधारीलाल गुप्ता अपने जमाने में सिर्फ उर्दू ही पढ़ सके थे, संस्कृत सीखने का मौका उन्हें नहीं मिला था। एक तो वैश्य, दूसरे मदरसे में उसका प्रबन्ध नहीं था। सो, इसी किस्म की मजबूरियों ने सलमान साहब से संस्कृत पढ़वाई और जब वे उच्च शिखा लेने के लिए शहर पहुंचे तो वहां भी उन्होंने संस्कृत ही पढ़ी। उन्हें विश्वास था कि एम०ए० करने के बाद वे कहीं-न-कहीं संस्कृत के लेक्चरर हो जाएँगे, पर ऐसा नहीं हुआ और अब वे

अपने ही कस्बे के नये-नये खुले इस्लामिया मिडिल स्कूल में हिस्ट्री पढ़ाने लगे थे।

मिश्रीलाल जिन दिनों इंटर कर रहा था, सलमान साहब ने उसे सुबह-शाम संस्कृत पढ़ाई थी, अत: वह उन्हें अपना गुरु मानता था और चरण छूता था। अब वह बी०ए० कर चुका था और किसी कम्पीटीशन की तैयारी कर रहा था। उसकी प्रबल इच्छा थी कि सलमान साहब जब उसके शहर में आएँ तो उसके निवास पर अवश्य पधारें। मिश्रीलाल की इस इच्छा को अनपेक्षित रूप से पूर्ण करने के लिए ही वे बगैर सूचना दिए उस शहर में पहुंच गए थे। अचानक उसके दरवाजे पर दस्तक देकर उसे चौंका देना चाहते थे।

सलमान सहब ने मुहल्ले का नाम याद किया-गोपालगंज। हाँ, यही नाम है। मकान नं० बी-पाँच सौ बासठ। राधारमण मिश्र का मकान। स्टेशन से यही कोई आध मील पर स्थित।

''क्यों भाई साहब, गोपालगंज किधर पड़ेगा?'' उन्होंने एक दूकानदार से पूछा तो पान की पीक थूकने का कष्ट न करते हुए उसने गलगलाकर यह बताया कि वे महाशय थोड़ा आगे निकल आए हैं। पीछे मुड़कर बिजली के उस वाले खेमे से सटी हुई गली में घुस जाएँ।

सलमान साहब उसकी दूकान के शेड से जब बाहर निकले तो लू का एक थपेड़ा चट्ट से उनके गाल पर लगा और उन्होंने अपनी एक हथेली कनपटी पर लगा ली। ठीक उसी वक्त उन्हें अपनी जेब में पड़े हुए प्याज का भी खयाल आया और क्षण-भर को वे आश्वस्त हुए। हां, यही गली तो है। उन्होंनें बिजली के खम्भे को ध्यान से देखा और गली में घुस गए।

दाहिनी ओर ए ब्लाक था। सलमान साहब ने सोचा कि बाईं ओर जरूर बी ब्लाक होगा, पर उधर एच ब्लाक था। वे और आगे बढ़े, शायद ए वाली साइड में ही आगे चलकर बी पड़े। लेकिन नहीं, जहाँ ए खत्म हुआ वहाँ से एम शुरू हो रहा था। बाईं ओर सी था। वे चकरा गए।

''कहाँ जाना है?'' एक सज्जन सड़क पर चारपाई निकालकर उसे पटक रहे थे और नीचे गिरे हुए खटमलों को मार रहे थे। उन्होंने उनकी बेचैनी को शायद भांप लिया था। सलमान साहब ने खुद अपने जूते से खटमल के एक बच्चे को मारा और पूछा, ''यह बी-पाँच सौ बासठ किधर पड़ेगा?''

''ओह, मिसिर जी का मकान? पह पुराने गोपालगंज में है। आप इधर से चले

जाइए और आगे चलकर मन्दिर के पास से दाहिने मुड़ जाइएगा। वहाँ किसी से पूछ लीजिएगा।'' सलमान साहब ने उन्हें धन्यवाद दिया और चल पड़े। मन्दिर के पास पहुँचकर जब वे दाहिनी ओर मुड़े तो उन्होंने देखा कि पीछे चार-पांच भैंसे बँधी हैं और एक लड़की अपने बरामदे में खड़ी होकर दूर जा रहे चूड़ीवाले को बुला रही है।

''पुराना गोपालगंज क्या यही है?'' उन्होंने उस लड़की से ही जानकारी लेनी चाही, पर उसने उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। उसका सारा ध्यान चूड़ीवाले के ठेले पर लगा हुआ था। सलमान साहब आगे बढ़ गए।

थोड़ा और आगे जाने पर पुराने ढंग के ऊँचे-ऊँचे मकान उन्हें दिखाई पड़े, जिनकी छाया में उस इलाके की सँकरी सड़कें अपेक्षाकृत काफी ठंडी थीं और नंग-धड़ंग बच्चे उन पर उछल रहे थे। सलमान साहब का मन हुआ कि यहाँ वे क्षण-भर के लिए खड़े हो जाएँ, पर अपने इस विचार का उन्होंने तुरन्त ही परित्याग किया और चलते रहे।

सामने एक लड़का दौड़ा आ रहा था। उसके पीछे-पीछे एक मोटा-सा चूहा घिसटा आ रहा था। लड़के ने चूहे की पूँछ में सुतली बाँध दी थी और उसका एक छोर थामे हुए था। सलमान साहब को देखकर-जैसी कि उन्हें उम्मीद थी-वह बिल्कुल नहीं ठिठका और उनकी बगल से भागने के चक्कर में उनसे टकरा गया।

''ये बी-पाँच सौ बासठ किधर है जी? तुम्हें पता है, मिश्रजी का मकान?''

लड़के ने उनकी ओर उड़ती-सी नजर डाली और एक मकान की ओर संकेत करता हुआ भाग गया। उसके पीछे-पीछे चूहा भी घिसटता हुआ चला गया।

सलमान साहब ने एक ठंडी साँस ली और उस विशालकाय इमारत के सामने जाकर खड़े हो गए। वहाँ बाहर की दो औरतें चारपाई पर बैठी थीं और पंजाब-समस्या को अपने ढंग से हल करने में लगी हुई थीं-

''अरी बिट्टन की अम्माँ, वो तो भाग मनाओ कि हम हिन्दुस्तान में हैं, पंजाब में होतीं तो न जाने क्या गत हुई होती....।''

''राधाचरण मिश्रजी का मकान यही है?''

स्त्रियाँ चारपाई पर बैठी रहीं, जबकि सलमान साहब ने सोचा था कि वे उठ खड़ी होंगी-जैसा कि उनके कस्बे में होता है-लेकिन यह तो शहर है....

''मिसिर जी यहाँ नहीं रहते। वे जवाहर नगर में रहते हैं। यहाँ सिरिफ उनके

किराएदार रहते हैं।'' एक स्त्री ने उन्हें जानकारी दी और खामोश हो गई।

''क्या काम है?'' दूसरी ने पूछा और अपना सिर खुजलाने लगी।

''उनके मकान में एक लड़का रहता है मिश्रीलाल गुप्ता, उसी से मिलना था।''

''ऊपर चले जाइए, सीढ़ी चढ़कर दूसरा कमरा उन्हीं का है।'' उस सिर खुजलाने वाली औरत ने बताया और खड़ी हो गई।

सलमान साहब भीतर घुस गए।

वहाँ अंधेरा था और सीढ़ी नजर नहीं आ रही थी। थोड़ी देर तक खड़े रहने के बाद उन्हें कोने में एक नल दिखाई पड़ा, फिर सीढ़ी भी दिखने लगी और वे संभल-संभलकर ऊपर चढ़ने लगे।

इस बीच उन्होंने अनुमान लगाया कि मिश्रीलाल सो रहा होगा और दरवाजा खटखटाकर उसे जगाना पड़ेगा। वह हड़बड़ाकर उठेगा और सिटकिनी खोलकर आंखें मलते हुए बाहर देखेगा। फिर सामने उन्हें पाकर चरणों पर झुक जाएगा।

''कौन?''

सीढ़ियाँ खत्म होते ही इस पार से किसी स्त्री का प्रश्न सुनाई पड़ा और वे ठिठक गए।

''मिश्रीलाल जी हैं क्या?''

''थोड़ा ठहरिए।''

उस स्त्री ने जरा सख्ती के साथ कहा और सलमान साहब को लगा कि स्त्री किसी महत्वपूर्ण काम में लगी हुई है। वे बिना किवाड़ों वाले उस द्वार के इस पार खड़े हो गए और कुछ सोचने लगे। तभी उन्होंने देखा कि अधेड़ वय की गोरी-सी औरत मात्र पेटीकोट और ब्रेसियर पहने बरामदे से भागकर सामने वाली कोठरी में घुस गई और जल्दी से साड़ी लपेटकर ब्लाउज का हुक लगाते हुई बाहर निकल आई।

''आइए!''

उसने सलमान साहब को पुकारा तो वे इस प्रकार भीतर घुसे, जैसे उन्होंने उस स्त्री को अभी थोड़ी देर पहले भीतर घुसते हुए देखा ही नहीं। स्त्री ने भी शायद यही सोचा और इत्मीनान से खड़ी रही।

सलमान साहब ने देखा कि बरामदे में बने परनाले के मुहाने पर एक उतरी हुई गीली साड़ी है और जय साबनु की गंध पूरे माहौल में भरी हुई है।

''मिश्रीलाल जी बगलवाले कमरे में रहते हैं, पर वे हैं नहीं।'' सुबह से ही कहीं गए हुए हैं। आप कहाँ से आ रहे हैं? बैठिए।''

स्त्री ने अत्यन्त विनम्रता के साथ यह सब कहा और एक बंसखट बिछाकर फिर भीतर घुस गई। थोड़ी देर बाद वह एक तश्तरी में गुड़ और गिलास में पानी लिए हुए बाहर आई और बंसखट पर तश्तरी रखकर खड़ी हो गई।

''पानी पीजिए, आज गर्मी बहुत है।''

इतना कहकर उसने अपनी उतारी हुई साड़ी की ओर देखा और न जाने क्या सोचकर पानी रखकर फिर भीतर घुस गई। अबकी वह ताड़ का एक पंखा लेकर लौटी और उसे भी बँसखट पर रख दिया।

सलमान साहब ने गुड़ खाया, पानी पिया और पंखा लेकर उसे हल्के-हल्के डुलाने लगे। ''मिश्रीलाल कहीं बाहर तो नहीं चला गया है?''

''बाहर तो नहीं गए हैं, शहर में ही होंगे कहीं। पिक्चर-विक्चर गए होंगे, या किसी दोस्त के यहाँ चले गए होंगे। रोज तो कमरे में ही रहते थे, आज ही निकले हैं बाहर।''

सलमान साहब ने घड़ी देखी, तीन बज रहे थे। उन्होंने थकान का अनुभव किया और बंसखट पर थोड़ा पसर गए।

स्त्री फिर भीतर से तकिया ले आई।

''आप थोड़ा आराम कर लें, गुप्ताजी शाम तक तो आ ही जाएँगे।'' स्त्री ने उनके सिरहाने तकिया रखा और अपनी गीली साड़ी बाल्टी में रखकर नीचे उतर गई।

सलमान साहब जब लेटे तो जेब में पड़ा प्याज उन्हें गड़ने लगा और उन्होंने उसे बाहर निकालकर चारपाई के नीचे गिरा दिया। थोड़ी देर बाद उन्हें नींद आ गई।

नींद में उन्होंने सपना देखा कि उनके स्कूल में मास्टरों के बीच झगड़ा हो गया है और पी०टी० टीचर सत्यनारायण यादव को हेड मास्टर साहब बुरी तरह डाँट रहे हैं। सलमान साहब उनका पक्ष लेकर आगे बढ़ते हैं तो सारे मास्टर उन पर टूट पड़ते हैं। उनकी नींद टूट जाती है।

वे उठकर बैठ जाते हैं।

लगता है, रात हो गई है। भीतर एक मटमैला-सा बल्ब जल रहा है, जिसकी रोशनी बरामदे में भी आ रही है। बरामदे में कोई बल्ब नहीं है। भीतर से आनेवाली

रोशनी के उस चौकोर-से टुकड़े में ही एक स्टोव जल रहा है और स्त्री सब्जी छौंक रही है। जहाँ दोपहर में जय साबुन की गन्ध भरी हुई थी, वहीं अब जीरे की महक उड़ रही है।

''मिश्रीलाल नहीं आया अभी तक?''

''अरे, अब हम क्या बताएँ कि आज वे कहाँ चले गए हैं? रोजाना तो कमरे में ही घुसे रहते थे।''

''उस स्त्री ने चिन्तित मन से कहा और स्टील के एक गिलास में पहले से तैयार की गई चाय लेकर उनके सामने खड़ी हो गई।''

''अरे, आपने क्यों कष्ट किया?''

''इसमें कष्ट की क्या बात है? चाय तो बनती ही है शाम को?''

सलमान साहब ने गिलास थाम लिया। स्त्री स्टोव की ओर मुड़ गई।

तभी एक सद्यःस्नात सज्जन कमर में गमछा लपेटे, जनेऊ मलते हुए सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर आए और कमरे में घुस कर हनुमान-चालीसा का पाठ करने लगे। जीरे की महक के साथ-साथ अब अगरबत्ती की महक भी वातावरण में तिरने लगी।

सलमान साहब ने भीतर झाँककर देखा तो पाया कि उस कमरे में पूरी गृहस्थी अत्यन्त सलीके के साथ सजी हुई थी और दीवारों पर राम, कृष्ण, हनुमान, कृष्ण, शंकर पार्वती, लक्ष्मी और गणेश आदि विभिन्न देवी-देवताओं के फोटो टँगे हुए थे। वहीं एक ओर लकड़ी की एक तख्ती लगी थी, जिस पर लिखा था-राममनोहर पांडेय, असिस्टेंट टेलीफोन ऑपरेटर। वे सज्जन अपने दाहिने हाथ में अगरबत्ती लिए, बायें हाथ से दाहिने हाथ की टिहुनी थामे सभी तस्वीरों को सुगन्धित धूप से सुवासित कर रहे थे और बीच-बीच में गीता के कुछ श्लोक भी सही-गलत उच्चारण के साथ बोल जाते थे। छत पर एक गन्दा-सा पंखा अत्यन्त धीमी चाल से डोल रहा था।

स्त्री ने सब्जी पका ली थी और अब वह रोटियाँ बना रही थी। सलमान साहब की इच्छा हुई कि अब वे वहां से चल दें और किसी होटल में ठहर जाएं, सुबह आकर मिश्रीलाल से मिल लेंगे, क्योंकि रात काफी होती जा रही है और उसका अभी तक पता नहीं है। वे खड़े हो गए।

''मैं अब चलता हूं, कल सवेरे आकर मिल लूंगा।''

उन्होंने अपना बैग उठा लिया।

''कहाँ जाएँगे?'' स्त्री ने उनसे सीधा सवाल किया और पीछे मुड़कर उनकी ओर ताकने लगी।

''किसी होटल में रुकूंगा।''

''क्यों भाई साहब, होटल में क्यों रुकिएगा, क्या यहां जगह नहीं है? खाना तैयार हो गया है, खा लीजिए और छत पर चलकर लेटिए, रात में गुप्ता जी आ ही जाएंगे। और अगर न भी आएँ तो सुबह चले जाइएगा। इस टाइम तो मैं आपको न जाने दूंगी। आइए, जूता-वूता उतारिए और हाथ-मुँह धोकर खाने बैठिए।''

''नहीं भाभीजी, आप क्यों कष्ट उठाती हैं?''

उस स्त्री को अब भाभी कहने में कोई हर्ज नहीं लगा सलमान साहब को।

''कष्ट की क्या बात है? आइए, खाना खाइए?''

सलमान साहब विवश हो गए। उन्होंने जूते उतारे और हाथ-मुँह धोकर खड़े हो गए। अब तक पांडेय जी अपनी पूजा-अराधना से खाली हो गए थे और भीतर बिछी चौकी पर बैठकर कुछ कागज-पत्तर देख रहे थे। सलमान साहब को उनसे नमस्कार करने तक का मौका अभी नहीं मिला था। यह उन्हें बहुत खल रहा था। लेकिन अब इतनी देर बाद नमस्कार करने का कोई औचित्य भी नहीं था, इसलिए उन्होंने सीधे-सीधे बात करने की कोशिश की।

''भाई साहब, आप भी उठिए।''

''नहीं, आप खाइए, मैं थोड़ी देर बाद भोजन करूँगा।''

उन्होंने तनिक शुष्क स्वर में सलमान साहब को उत्तर दिया और बगैर उनकी ओर देखे अपने कागज-पत्तर में उलझे रहे।

''आप बैठिए, दिन-भर के भूखे-प्यासे होंगे। वे बाद में खा लेंगे। दफ्तर से आकर उन्होंने थोड़ा नाश्ता भी लिया है। आप तो सो रहे थे।''

स्त्री ने एक बार फिर आग्रह किया और पीढ़ा रखकर थाली लगा दी। लोटे में पानी और गिलास रख दिया।

सलमान साहब बैठ गए।

वे भीतर से बहुत आह्लादित थे। उनके कस्बे में ऐसा नहीं हो सकता कि बगैर जाति-धर्म की जानकारी किए कोई ब्राह्मण किसी को अपने चौके में बैठाकर खाना खिलाए, लेकिन शहर में ऐसा हो सकता है। यद्यपि यह कोई बड़ा शहर नहीं है और

यहां के लोग भी बहुत कुछ ग्रामीण संस्कारों वाले हैं, पर है तो आखिर शहर। यहाँ के पढ़े-लिखे लोग प्रगतिशील विचारों के होते हैं। उनमें संकीर्णता नहीं होती। वे धर्मप्रवण होते हुए भी रूढ़ धारणाओं से मुक्त होते हैं।

सलमान साहब सोच रहे थे और खा रहे थे। उन्हें बैंगन की सब्जी बहुत अच्छी लग रही थीं। ताजे आम का अचार यद्यपि पूरा गला नहीं था, पर स्वादिष्ट था। रोटियों पर घी भी चुपड़ा हुआ था। ऐसी रोटियां उनके घर में नहीं बनतीं। वहां तो उलटे तवे पर बनी हुई विशालकाय और अर्धसिंकी चपातियां किसी पुराने कपड़े में लिपटी रखी होती हैं....

स्त्री ने एक फूली हुई, भाप उड़ाती रोटी उनकी थाली में और डाल दी थी।

''आप गुप्ता जी के गाँव से आए हैं?''

सलमान साहब ने सिर उठाया। पांडे जी अब कागज-पत्तरों से खाली हो गए थे और आम काट रहे थे। उनकी आवाज में उसी तरह की शुष्कता विद्यमान थी।

''जी हाँ!'' सलमान साहब ने जवाब दिया और अचार उठाकर चाटने लगे।

पांडे जी ने संकेत से पत्नी को भीतर बुलाया और आम की तीन फाँकिया थमा दीं।

स्त्री ने उन्हें सलमान साहब की थाली में डाल दिया।

''आप उनके भाई हैं?'' फिर वही शुष्क स्वर।

सलमान साहब को कोफ्त हुई।

''जी नहीं, वह मेरा शिष्य है।''

''क्या आप अध्यापक हैं?''

''जी हाँ।''

''कहाँ पढ़ाते हैं?''

''आप भी गुप्ता हैं?''

''जी नहीं।''

''ब्राह्मण हैं?''

''नहीं, मैं मुसलमान हूँ, मेरा नाम मुहम्मद सलमान है।''

उन्होंने अपने पूरा परिचय दिया और रोटी के आखिरी टुकड़े में सब्जी लपेटने

लगे।

पांडे जी ने अपनी स्त्री की ओर आँखें उठाईं तो पाया कि वह खुद उनकी ओर देख रही थीं। ऐसा लगा कि दोनों ही एक-दूसरे से कुछ कह रहे हैं, पर ठीक-ठीक कह नहीं पा रहे हैं।

सलमान साहब अगली रोटी का इन्तजार कर रहे थे, लेकिन स्त्री स्टोव के पास से उठकर भीतर चली गई थी और कुछ ढूंढने लगी थी।

सलमान साहब आम खाने लगे थे।

स्त्री जब बाहर निकली तो उसके हाथ में कांच का एक गिलास था और आंखों में भय।

उसने सलमान साहब की थाली के पास रखा स्टील का गिलास उठा लिया था और उसकी जगह काँच का गिलास रख दिया था।

सलमान को याद आया कि अभी शाम को जिस गिलास में उन्होंने चाय पी थी, जिस थाली में वे खाना खा रहे थे, वह स्टील की ही थी। पल-भर के लिए वे चिन्तित हुए। फिर उन्होंने अपनी थाली उठाई और परनाले के पास जाकर बैठ गए। गुझना उठाया और अपनी थाली माँजने लगे।

स्त्री ने थोड़ा-सा पीछे मुड़कर उनकी ओर देखा, लेकिन फिर तुरन्त बाद ही वह अपने काम में व्यस्त हो गई।

मिश्रीलाल अभी तक नहीं आया था।

अब्दुल बिस्मिल्लाह

जन्म : जुलाई, 1949

प्रमुख कृतियाँ : झीनी झीनी चदरिया (उपन्यास) कितने कितने सवाल (कहानी संग्रह) छोटे बुतों का बयान (कविता)

आवाज की अरथी

–आलमशाह ख़ान

सूरज ढले छग्गी पोखर टोले पहुँची थी। धनुष की ढब मुड़ी बाँस की खपच्चियों पर सधी अपनी झुग्गी के सामने, कंधे पर झूलते तार के छींके-पिंजरे पटक कर उसने हाथ झटक दिया। फिर ओछे हाथ को पूरे हाथ से सहलाकर सामने देखा–नरसिंघा मरी चाल से बढ़ा आता था। उसके कंधे पर टिकी सोटी पर रबर के डोरे में बँधे तोता-मैना सटे हुए डोल रहे थे। उसे लगा भोर को जितने तोता-मैना थे, उतने ही अब भी हैं। एक कड़ुवाहट उसके सूखे गले में उतर गई।

पोखर की पुलिया पर बैठे फन्ने ने दोनों माँ-बेटों को झुग्गी के सामने जो देखा तो लकड़ी के सहारे टाँग उछालता उनके पास चला आया। थोड़ी देर चुपचाप रहा। छींके-पिंजरे और कागजी तोता-मैना के ढेर को देखकर उसने दोनों आँखें तरेर कर घूरा और बिना कुछ बोले झुग्गी के सिरे पर बिखरे अधबने खिलौनों को झल्ला कर एक ठो करने लगा। फिर एकाएक सामने पड़े खिलौनों और छींके-पिंजरों को दोनों के सर पर मार गालियाँ बकने लगा।

''अब और पिंजरे-खिलौने बनाकर तुम दोनों के बापों को उसमें धरूँ-बहलाऊँ?''

''अरे! कुल्लाय क्यूँ है, इन छींके-पिंजरों पर कोई हाथ न धरे तो मैं क्या करूँ? किसी के गले बाँध दूँ इन्हें?''

''...तू न बँध जा किसी के गले? इधर को गला फाड़ती, बस्ती-बाजार में बोल नी फूटता के ले लो छींका-पिंजरा...''

''अरे दिन भर बोला...गला फाड़ा पर कोई आँख न उठी। एक बाबू ने देखा,